ISSN : 2456-8856

पंजीयन संख्या RNI No.: MPHIN/2002/09510 डाक पंजीकृत क्रमांक मालवा डिवीजन/204/2024-2026 उज्जैन (म.प्र.)

UGC Care Listed and Peer Reviewed Referred Bilingual Monthly International Research Journal

प्रेषण दिनांक 30 पृष्ठ संख्या 28

आश्वस्त

वर्ष 27, अंक 253 नवंबर 2024

संविधान दिवस की

हार्दिक शुभकामनाएँ

संपादक – डॉ. तारा परमार

भारती दलित साहित्य अकादमी मध्यप्रदेश, उज्जैन की अन्तर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका

वर्ष : 27 अंक 253
नवम्बर 2024

आश्वस्त

(सन् 1983 से निरंतर प्रकाशित)

RNI No.: MPHIN/2002/09510
ISSN : 2456-8856

भारती दलित साहित्य अकादमी मध्यप्रदेश, उज्जैन (पंजीयन क्रमांक 2327 दिनांक 13/05/1999) की मासिक पत्रिका

संस्थापक सम्पादक
डॉ. पुरुषोत्तम सत्यप्रेमी

संरक्षक
सेवाराम खाण्डेगर
11/3, अलखनन्दा नगर, बिड़ला हॉस्पिटल के पीछे,
उज्जैन मो.: 98269-37400

परामर्श
आयु. सूरज डामोर IAS
पूर्व सचिव-लोक स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण वि.
म.प्र.शासन, भोपाल मो. 094253-16830

सम्पादक
डॉ. तारा परमार
9-बी, इन्द्रपुरी, सेठी नगर, उज्जैन-456010
मो. 94248-92775

सम्पादक मण्डल :
डॉ. जयप्रकाश कर्दम, दिल्ली
डॉ. खन्नाप्रसाद अमीन, गुजरात
डॉ. जसवंत भाई पण्ड्या, गुजरात
डॉ. शैलेन्द्र कुमार शर्मा, म.प्र.

Peer Review Committee
डॉ. श्रवणकुमार मेघ, जोधपुर(राजस्थान)
प्रो. दत्तात्रय मुरुमकर, मुंबई (महाराष्ट्र)
प्रो. रश्मि श्रीवास्तव, उज्जैन (म.प्र.)
डॉ. बी.ए.सावंत, सांगली (महाराष्ट्र)

कानूनी सलाहकार
श्री खालीक मन्सूरी एडव्होकेट, उज्जैन

अनुक्रमणिका

क्र.	विषय	लेखक	पृष्ठ
1	अपनी बात	डॉ. तारा परमार	3
2	असम की पातिराभा जनजाति एवं उनके लोकपर्व : एक अध्ययन	सुश्री दीपिका दास (शोधार्थी)	4
3	DEVELOPMENT OF CRITICAL THINKING, REFLECTIVE THINKING AND HYPOTHESIZING AMONG LEARNER : CASE STUDY OF A SCHOOL IN KOHIMA	Dr. Prasenjit Pal Assistant Professor Dr. Munni Chaudhary Assistant Professor	7
4	दलित नारी संवेदना की दस्तावेज : 'सुमंगली'	डॉ. जयश्री. ओ.	11
5	भारतीय लोकतंत्र के दीर्घ दृष्टा : डॉ. बी.आर. अम्बेडकर के अनुसार लोकतंत्र	डॉ. मगन भाई मकवाना	14
6	Impact of Domestic Violence in Live-In Relationships : An Analysis under the Protection of Women from Domestic Violence Act, 2005	- Dr. Sudipta Adhikary Dr. Par amita Bhattacharyya	16
7	शैक्षिक संगठनात्मक सुधार और विद्यालयी शिक्षा : NEP-2020 के अंतर्गत गुणात्मक सुधारों का विश्लेषण	डॉ. संदीप कुमार डॉ. श्याम सुंदर	20
8	वंचित-उपेक्षित काव्यधारा की उत्तरोत्तर प्रगति	डा. श्यौराज सिंह 'बेचैन'	23
9	अम्बेडकर जनसंचार के 14 भागों का विमोचन	साक्षी गौतम	25

UGC Care Listed Journal
खाते का नाम - आश्वस्त (Ashwast)
खाते का नं.- 63040357829
बैंक - भारतीय स्टेट बैंक,
शाखा- फ्रीगंज, उज्जैन (Freeganj, Ujjain)
IFS Code - SBIN0030108

Web : www.aashwastujjain.com
E-mail : aashwastbdsamp@gmail.com

एक प्रति का मूल्य	:	रुपये 20/-
वार्षिक सदस्यता शुल्क	:	रुपये 200/-
आजीवन सदस्यता शुल्क	:	रुपये 2,000/-
संरक्षक सदस्यता शुल्क	:	रुपये 20,000/-

विशेष : सम्पादन, प्रकाशन एवं प्रबंध अवैतनिक तथा पत्रिका में प्रकाशित विचारों से सम्पादक-मंडल का सहमत होना आवश्यक नहीं है। विवाद की स्थिति में न्यायालय क्षेत्र उज्जैन रहेंगा।

अपनी बात

भारतीय संविधान के प्रथम चार शब्द–''हम भारत के लोग'' संविधान के सबसे अधिक आधारभूत शब्द हैं, जो देश की जीवन–यात्रा के चार संकल्पित पुरुषार्थ–न्याय, स्वतंत्रता, समता और बंधुता के रूप में समाहित है। संविधान के यह प्रथम चार शब्द और संविधान के यह चार मूल संकल्प एक नये जीवन–दर्शन, एक नये स्वप्न, एक नयी जीवन शैली, एक नयी संस्कृति, एक नयी मूल्य माला और एक नयी निष्ठा को अभिव्यक्ति देते हैं।

स्वतंत्रता प्राप्ति के 77 वर्ष एवं संविधान लागू हुए 74 वर्ष के बाद भी सामाजिक समानता स्थापित नहीं हो पाने का यक्ष प्रश्न हमारे सामने खड़ा है। संविधान शिल्पी बाबासाहेब डॉ. भीमराव अम्बेडकर ने देश को भारत का संविधान सौंपते हुए अपने संबोधन में कहा था कि–''राजनीतिक आजादी का तब तक कोई मूल्य नहीं हैं जब तक देश सामाजिक, आर्थिक गुलामी से मुक्त नहीं हो जाता है। यह संविधान देश के नागरिकों को सामाजिक और आर्थिक न्याय दिलाने के लिये कानूनी पहल का महत्वपूर्ण दस्तावेज है, बशर्ते उसको लागू करने वालों की नियत दुरुस्त हो और उनकी सामाजिक प्रतिबद्धता देश के कमजोर तबके के प्रति हो।

हजारों वर्षों तक दबे–कुचले समाज को आजादी की इस नई सुबह में जब तक विशेष सुविधाएं और अवसर नहीं दिए जायेंगे, तब तक और सामंती व्यवस्था में जकड़ा हमारा सामंती सामाजिक वातावरण जड़ से खत्म नहीं किया जाता है तब तक किसी भी तरह की गैर–बराबरी समाप्त किए जाने का सपना देखना निराधार होगा।''

बाबा साहेब डॉ. भीमराव अम्बेडकर के 125वें जन्मोत्सव एवं संविधान दिवस 2015 के अवसर पर संसद में अपना उद्‌बोधन देते हुए माननीय प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी जी ने कहा था कि–''बाबा साहेब की दीर्घ दृष्टि के सभी प्रशंसक रहे है। जब हमारा संविधान बना तब संविधान सभा के प्रोविजनल चेअरमेन श्रीमान सच्चिदानन्द सिन्हाजी ने एक बात कही थी, उसका मैं उल्लेख करना चाहता हूँ। अपने उद्‌घाटन भाषण में जोसफ स्टोरी के शब्दों का उल्लेख किया था। जोसफ स्टोरी ने कहा था कि–''The constitution has been readed for immortally if the work of man may justly aspire to such a title" संविधान अमर रहने के लिये बनाया गया है। मनुष्य के द्वारा कभी कोई चीज अमर हो नहीं सकती, लेकिन संविधान अमर हो सकता है ये बात कही थी। मनुष्य कभी यह नहीं कर सकता है, लेकिन किया था।

बाबा साहेब डॉ. अम्बेडकर की विशेषता की ओर हम नजर करें, दीर्घ दृष्टा और महापुरुष कैसे होते है ? तो इसका यह एक उदाहरण है कि–यदि किसी को सरकार पर प्रहार करना हो तो भी बाबा साहेब की पंक्तियाँ काम आती है। यदि किसी को अपने बचाव के लिए कुछ तर्क देना हैं तो भी बाबा साहेब का कथन काम आता है। यदि किसी को अपनी न्यूट्रल बात बतानी हो तो भी बाबासाहेब का कथन ही काम आता है। इसका तात्पर्य यह है कि उस महापुरुष में कितनी दीर्घ दृष्टि थी, कितना विजन था, कितने व्यापक फलक पर उन्होंने अपने विचारों को व्यक्त किया था कि जो आज भी विरोध करने के लिए मार्गदर्शक है, शासन चलाने वाले के लिए भी मार्गदर्शक है। न्यूट्रल मूक रक्षक बैठे लोगों के लिए भी यह मार्गदर्शक है। यह अपने आप में अजूबा है। वरना विचार तो कई होते हैं, जो एक ही खेमे के काम आता है, सब खेमों के लिए काम नहीं आता, दूसरे एक ही कालखण्ड के लिये काम आता है, सब कालखण्डों के लिए काम नहीं आता। बाबासाहेब की यह विशेषता रही है कि उनके विचार हर कालखण्ड के लिए है, हर पीढ़ी के लोगों के लिए है, हर तबके के लिए उपकारक रहे है। मतलब उन विचारों में ताकत थी। तपस्या का एक अर्थ था जो राष्ट्र को समर्पित था और 100 साल के बाद का भी देश कैसा हो सकता है, यह देखने का सामर्थ्य था। तब जाकर के इस प्रकार की बात निकल पाती है और इसलिये सहज रूप से उस महापुरुष को नमन करने का मन होना बहुत ही स्वाभाविक है।

भारतीय संविधान स्वीकारता है कि हमारा देश एक बहु–संस्कृतियों वाला देश है और वादा करता है कि सरकारों द्वारा इन सभी संस्कृतियों की बगैर किसी भेदभाव के रक्षा की जायेगी। संविधान अच्छे कार्य करने का केवल एक साधन है, स्वयं में साध्य नहीं है। अच्छे संविधान से जब बुरे परिणाम निकले तो समझना चाहिए कि संविधान को चलाने वाले लोगों की नियत में ही कोई खराबी है, जिसे छुपाये रखने के लिये वे आंगन को टेढ़ा बता रहे हैं।

अतः यदि हम पूरे मन से चाहते हैं कि देश के संवधिान के तहत बने कानून अच्छे परिणाम भी दे, उसके अंदर समाहित समानता, स्वतंत्रता, न्याय और भाईचारे की भावनाएं निर्विरोध फल–फूलकर इस देश को एक सुदृढ़ सम्पन्न और शांतिमय देश बनाने में अंततः सफल हो तो उन शास्त्रों की समीक्षा करनी होगी जिनकी मान्यताएं संविधान की मान्यताओं का सच्चा क्रियान्वयन करने में पग–पग पर बाधक बनी रहती है और जो संविधान की कटिबद्धता के विपरीत खड़ी रहने के लिये जनमानस के विवेक पर हावी बना दी गई है। साथ ही हमें यह भी सुनिश्चित करना है कि संविधान के पीछे का मूल दर्शन और संविधान का मूलभूत सामाजिक, आर्थिक आधार पवित्र और अलंघ्य बना रहे।

जय भीम!

संविधान दिवस की हार्दिक शुभकामनाएँ।

– डॉ. तारा परमार

असम की पातिराभा जनजाति एवं उनके लोकपर्व : एक अध्ययन

– सुश्री दीपिका दास (शोधार्थी)

शोध सार : भारतीय समाज विभिन्न जातियों और जनजातियों का संगम स्थल है। यहाँ हर जनजाति अपने आप में विशिष्ट और अद्‌भुत है। आधुनिक युग की खोज उपभोगतावाद पर केंद्रित है इसे नकारा नहीं जा सकता। परंतु इसी के साथ आदिम इतिहास और विभिन्न जनजातियों का अध्ययन भी आधुनिक समाज के लिए अत्यंत आवश्यक है। यह अध्ययन उस मार्ग को प्रशस्त करता है, जिससे उस जनजाति के लोकपर्व, आस्था एवं मान्यताओं को गहराई से जाना जा सके। असम की पातिराभा जनजाति भी उनमें से एक है, जो सांस्कृतिक दृष्टि से तो उन्नत है ही साथ ही साथ अपनी परंपरागत मान्यताओं के साथ हिन्दू धर्म की मान्यताओं को भी अपने अन्दर समाहित किए हुए है। समावेशन की यही कला पातिराभा जनजाति की विशिष्टता का परिचायक है।

बीज शब्द : जनजाति, पातिराभा, खोकचि या बयाखो, लांगा पूजा, मारे पूजा, डिंगा पूजा, रोंताक पूजा, कुबेर पूजा आदि।

पूर्वोत्तर भारत के असम राज्य में अति प्राचीन काल से निवास कर रहे आदिवासी लोगों के बीच मंगोलिय अंचल से आव्रजित 'राभा जनजाति' का विशेष स्थान है। इतिहासकारों का कहना है कि मंगोलिय अंचल के अन्य जनजाति की तरह ही राभा जनजाति भी पहले चीनी–तिब्बती क्षेत्र में निवास करते थे। परवर्ती समय में बर्मा के रास्ते उन्होंने असम में प्रवेश किया। राभा जनजाति की कई उपजातियाँ हैं – रंगदानी, पाति, मायतरी, दाहरी, हाना, चोंगा, कोचा, तोतला आदि। वर्तमान में इनकी तीन उपजातियाँ पाति, रंगदानी और मायतरी ही अधिक पाई जाती हैं। 'पातिराभा' राभा जनजाति की सर्वाधिक बड़ी उपजातियों में से एक है। इसे हालुवा राभा के नाम से भी जाना जाता है। ये कामरूप के विस्तृत अंचलों और गोवालपारा के धुपधरा से लेकर दूधनोई क्षेत्र में निवास करते हैं।

पातिराभा के नामकरण के संदर्भ में कोई ऐतिहासिक जानकारी नहीं मिलती। 'पाति' शब्द की व्युत्पत्ति को लेकर भी विद्वानों में मत वैभिन्न्य है। राभा भाषा और साहित्य के प्रणेता राजेन राभा ने अपनी पुस्तक 'राभा जनजाति' में एक किवदंती को आधार बनाकर राभा के नामकरण के विषय में बताया है – **"राभाहकलर जातीय उत्सव 'बयाखो पूजा' उत्सवटो सुचारूरूपे संपादन करिबलोई श्रमर विभाजन करी लोइसिल। उत्सव स्थलित पूजार कामत प्रसाद वितरण, रंधन कामत आरू सामूहिक भोजनत बहु कोलपातर आवश्यक होइसिल। एई पात संग्रह करिबलोई जिदल मानुहर उपरत दायित्व दिया होइसिल, तेउलोके शेषत पाति राभा नाम पाय।"**[1] अर्थात् राभा जनजाति का जातीय उत्सव है 'बयाखो पूजा'। पूजा सुचारू रूप से संपन्न हो इसीलिए उन्होंने आपस में श्रम विभाजन (कार्यों का बटवारा) कर लिया, जैसे – प्रसाद वितरण, रसोई का कार्य और सामूहिक भोज हेतु केले के पत्तों का संग्रह आदि। पत्तों के संग्रह की जिम्मेदारी जिस दल को दी गई थी, वे अंततः पातिराभा के नाम से जाने गए। परंतु यह दृष्टिकोण वैज्ञानिक नहीं है। राभा जनजाति के लोग विभिन्न भौगोलिक क्षेत्रों में निवास करते हैं। यदि राभा की उपजातियों का विभाजन 'बयाखो पूजा' के श्रम विभाजन के आधार पर होता तो वे एक ही भौगोलिक क्षेत्र में निवास कर रहे होते।

उपेन राभा हाकासाम ने भाषाई दृष्टिकोण से पातिराभा के नामकरण के विषय में बताया है – **"आमार धारणा ब्रिटिश पंडितहकले दिया 'दे स्पिक ए पाटोईस ऑफ असमिज बंगाली लैंग्वेज' विभूषणर**

पराहे पाति (पाटोइ) नामटो पाईसे।''[2] अर्थात् पाति (पाटोइ) नाम ब्रिटिश विद्वानों द्वारा दिए गए मत से लिया गया है। वहीं कुछ राभा लोगों का मानना है कि 'पाति' शब्द की व्युत्पत्ति 'खाटी' शब्द से हुई है, जिसका अर्थ है वास्तविक या शुद्ध। ऐसे अनेकानेक मतों के कारण ही पाति शब्द की व्युत्पत्ति एवं उसका सही अर्थ बताना कठिन हो गया है, परंतु ब्रिटिश विद्वानों द्वारा किए गए नामकरण 'पाटोइ राभा' द्वारा 'पातिराभा' को सिरे से नकारा नहीं जा सकता।

पाति राभा असमिया भाषी राभा है। कई विद्वानों का मानना है कि पातिराभा पहले राभा भाषा बोलते थे, जो चीनी–तिब्बती भाषा परिवार की तिब्बती–बर्मी शाखा से संबंधित है। परंतु वास्तविकता यह है कि उन्होंने उस भाषा को काफी पहले ही खो दिया है और अब दैनिक जीवन में स्थानीय असमिया भाषा का उपयोग कर रहे हैं। पातिराभा की धार्मिक मान्यताओं के विषय में ललित चंद्र राभा का कहना है–**'पातिराभाहकल राभार अर्थीभूत फैद। राभा जनजातिर पाति, दहरी, बिटलिया, हाना आरू तोतला फैदर पातिराभालोकहकले खूब उसरर परा आर्य असमिया भाषीहकलर संपर्कलोई अहार कारणे तेऊलोकर उपरत आर्य संस्कृतिर प्रभाव जथेष्ठ। पातिराभाहकले राभार परंपरागत उत्सव–व–पार्वणबिलाक पालन करार लगते हिंदू धर्मर लगत जड़ित उत्सव–पार्वणबिलाको पालन करे। राभार परंपरागत खोकची, लांगा आदि देव–देविक पूजा करार लगते हिंदू धर्मर लगत जड़ित दुर्गा, काली, विश्वकर्मा, लक्ष्मी, शिव आदि देव–देविक पूजा–अर्चना करे। पूजा अर्चना करुते एउलोके हिंदू धर्मार नियमेरे धूप–काठी, साकी–बंती ज्वलाय, माह–प्रसाद, फल–फूल, गाखिर, सेनी आगबढ़ाए। अवश्ये पूजबोर ब्राहमणर द्वारा नकराइ निजर मनुहार द्वारा करुवा हाय। आनहाते लांगा आदि स्वकीय देव–देविर पूजात परंपरागत रीति–नीति अनुशरण करी मद, पिठागुरी, गाहोरीर भू आदि आगबढुवा हय।'**[3] अर्थात् पातिराभा जनजाति आर्य संस्कृति से सर्वाधिक प्रभावित है। आर्य असमिया भाषियों के संपर्क में आने के कारण उन पर आर्य संस्कृति का प्रभाव पड़ा। पातिराभा जनजाति के लोग राभा जनजाति की परंपरागत पर्व को मानाने के साथ ही हिंदू धर्म के त्योहारों का भी पालन करते हैं। जहाँ वे राभा जनजाति के खोकचि और लांगा आदि देवी–देवताओं की पूजा करते हैं, वहीं हिंदू धर्म के दुर्गा, काली, लक्ष्मी, शिव आदि देवी–देवताओं की पूजा भी हिंदू धर्म के नियमानुसार धूप–दीप, फल–फूल, दूध–शर्करा आदि चढ़ाकर करते हैं। विशेष बात यह कि वे यह पूजा ब्राह्मणों के हाथों न कराकर अपने ही लोगों द्वारा करवाते हैं। वहीं दूसरी तरफ लांगा आदि देवी–देवता की पूजा परंपरागत रीति–नियमों के अनुरूप शराब और पिठागुरी (एक प्रकार का लोक खाद्य) आदि का भोग लगाकर करते हैं। पातिराभा जनजाति का प्रत्येक पर्व अपने भीतर एक विशिष्ट मान्यता को छुपाए हुए है –

- **खोकचि या बयाखो** : यह राभा जनजाति क मुख्य धार्मिक अनुष्ठान है। पहले इसे जेठ महीने में सात दिन और रात तक मनाया जाता था। परंतु अब इसे सावन और भादो के महीनों में तीन दिनों में ही समाप्त कर दिया जाता है। बयाखो कृषि की अधिष्ठात्री देवी हैं। इस पूजा का मूल उद्देश्य कृषि हेतु उत्तम परिवेश, उत्पादन में वृद्धि तथा विभिन्न रोगादि से मुक्त होकर एक स्वस्थ जीवन जीना सम्मिलित है।

- **लांगा पूजा** : पाति राभा के बीच लांगा पूजा का प्रचलन है। लांगा देवता को महादेव का स्वरूप मानकर उनकी पूजा की जाती है। जेठ के माह में गाँव या क्षेत्र के कल्याण हेतु सार्वजनिक रूप से गाँव के बाहरी जंगलों में अथवा नदी के किनारे प्रत्येक देवी के नाम पर एक पत्थर स्थापित कर उनकी पूजा की जाती

है। इस पूजा के दौरान मुर्गा, बकरा और कबूतर की बलि देने का प्रावधान है।

• **मारे पूजा** : पाति राभा के बीच मारे पूजा का विशेष प्रचलन है। यह पूजा सर्प की अधिष्ठात्री देवी मनसा को प्रसन्न करने हेतु किया जाता है। इस पूजा का मूल उद्देश्य ग्रामवासियों की अमंगल से रक्षा करना है। यह पूजा सार्वजनिक रूप से लेकर व्यक्तिगत स्तर तक की जाती है।

• **रोंताक पूजा या घरगोसानी पूजा** : प्राचीन काल से राभा जनजाति की प्रत्येक उपजातियों के घरों में रोंताक पूजा होती आ रही है। इस पूजा में सूअर की बलि दी जाती है। पूजा शैतान के दो भाई क्रमशः 'हातादार' और 'विदातार' के लिए बलि देने की प्रथा है। यह बलि सार्वजनिक रूप से दी जाती है। मान्यता यह है कि ऐसा कर के नए धन को अकारण नष्ट होने से बचाया जा सकता है। यह पूजा तीन दिनों तक निर्बाध गति से चलती है।

• **ठकुरानी (भगवती) पूजा** : यह पूजा राभा की सभी उपजातियों द्वारा मनाई जाती है। लगातार और असहनीय सिरदर्द की स्थिति में कबूतर या मुर्गी की बलि ठकुरानी (भगवती) के सम्मुख देने की परंपरा है। मान्यता यह है कि ऐसा करने से बुखार और सिरदर्द ठीक हो जाता है।

• **डिंगा पूजा** : यह पूजा जेठ माह के बीच मनाया जाता है। यह पूजा नदी के किनारे अथवा खेतों में (जहाँ पानी जमा हो) की जाती है। इस पूजा को 'केचाईखैती' के नाम से भी जाना जाता है। गाँव से भूत–प्रेतों को भागने के उद्देश्य से यह पूजा की जाती है। यही कारण है कि पूजा के पश्चात् घर लौटते समय पीछे मुड़कर नहीं देखा जाता। यह माना जाता है कि यदि कोई व्यक्ति किसी कारण पीछे मुड़कर देखता है तो प्रेतादि उनके साथ गाँव वापस लौट आते हैं। यह पूजा पाति और रंगदानी राभा के बीच अधिक प्रचलित है।

• **कुबेर पूजा** : यह पातिराभा जनजाति की एक विशेष पूजा है। कुबेर पूजा की कोई निश्चित तिथि नहीं होती। विशेष बात यह है कि समुदाय का कोई भी व्यक्ति यह पूजा कर सकता है। जब किसी व्यक्ति को बुखार होता है और गंभीर शरीर दर्द होता है, तो उसे कुबेर पूजा करने की सलाह दी जाती है। ऐसे बुखार की स्थिति में राभा जनजाति के लोग कुबेर की पूजा करते है। इस पूजा में मुर्गे की बलि दी जाती है।

निष्कर्ष : इस प्रकार यह देखा जा सकता है कि कृषिजीवी पातिराभा जनजाति के लोग स्वभावतः धार्मिक है। प्राचीन काल से ही वे पारंपरिक रूप से विभिन्न देवी–देवताओं की पूजा–अर्चना करते आ रहे हैं। इनके द्वारा किया गया पूजा जनकल्याण की भावना को अपने अंदर समाहित किए होता है। हालाँकि पातिराभा जनजाति पर आर्य संस्कृति का विशेष प्रभाव दृष्टिगोचर होता है। परंतु इसके साथ ही उन्होंने अपनी परंपरागत रीति–नियमों को भी संजोये रखा है। सामान्य शब्दों में कहे तो इनकी धार्मिक मान्यताएँ पारंपरिक राभा मान्यता और हिंदू मान्यताओं का समन्वय है।

– सुश्री दीपिका दास
शोधार्थी,
हिंदी विभाग
काशी हिंदू विश्वविद्यालय, वाराणसी, (उ. प्र.)
संपर्क – 8724969917

संदर्भ :

1. राभा, राजेन, राभा जनजाति, 2008, पृष्ठ – 31
2. हाकासाम, उपेन राभा, राभा समाज आरू संस्कृति, 2010, पृष्ठ – 32
3. राभा, ललित चंद्र, राभा संस्कृतिर परिवर्तन आरू रूपांतर, 2015, पृष्ठ – 18

DEVELOPMENT OF CRITICAL THINKING, REFLECTIVE THINKING AND HYPOTHESIZING AMONG LEARNER : CASE STUDY OF A SCHOOL IN KOHIMA

- Dr. Prasenjit Pal
Assistant Professor

- Dr. Munni Chaudhary
Associate Professor

ABSTRACT

"Which teaching method is appropriate for social science teaching-learning process in school?" - is a debated question. The social science education involves critical thinking, reflective thinking, and hypothesizing. The relative usefulness of conventional and experiential methods in teaching social science curriculum is a central point of discussion in present paper. The subjects of the study were 92 students (32 boys and 60 girls) of Class-7 and 26 teachers of a school in Kohima district, Nagaland. The subjects were assigned into two groups. The experimental group was taught by experiential method and control group was taught by conventional method. Simultaneously a group of 26 teachers were selected randomly from the school for observing the two groups of students. The teachers' responses about the relative effectiveness of the experiential method and conventional method were taken by administering a self-constructed opinionnaire. Researcher uses x^2 test to understand the relative effectiveness of the methods. The experiential method is proven as more effective method in the development of critical thinking, reflective thinking, and hypothesizing.

KEY WORD

Critical Thinking, Reflective Thinking, Hypothesizing, Experiential learning

INTRODUCTION

Yashpal Committee's landmark report (1993) “Learning Without Burden" was in the view to overhaul the teaching-learning process persist in Indian schools. It favored a drift in school curriculum, pedagogy, and assessment towards learner-centric approach. NEP 2020 envisioned that schools should nurture critical and reflective thinking among the students. NEP 2020 re-emphasized experiential learning as the pedagogical practice in schooling. Such a kind of experiential learning could lead the way to

developing inquisitive mindset among the learner. In the present study researcher conducted a case study of RGHSS Kohima School, Nagaland to understand the effect of experiential learning on the learner. The unit titled "Market Around Us" from the class-7 Hornbill Social Science textbook was chosen. Two groups were formed out of Class -7 students. One group was taught through experiential method. Teacher took them to local markets. They visited local producers, sellers, and consumers, and witnessed bargaining, exchange, price, and money transactions. They built economic laboratories. The other group was instructed through class lectures. Then school teachers were asked to give their opinion regarding development of critical thinking, reflective thinking, and ability to form hypotheses among the learners. The objective of the study is to ascertain whether experiential learning could be utilized as an effective approach for teaching social science in Middle School Stage (Class 6 to Class 8) in facilitating critical thinking, reflective thinking, and hypothesizing among school children.

HYPOTHESIS

H_{01}: There is no significant relationship between the opinion of teachers on control group and experimental group regarding the development of critical thinking.

H_{02}: There is no significant relationship between the opinion of teachers on control group and experimental group regarding the development of reflective thinking.

H_{03}: There is no significant relationship between the opinion of teachers on control group and experimental group regarding the development of ability to form hypotheses.

SAMPLES

All the 92 (32 boys and 60 girls) students studying in class 7 were selected as sample of the study. Then 92 subjects were assigned to two equal groups through a technique of matching. Two groups randomized matched subject post-test true experimental design was used. Experimental group and control group were taught by using lesson transcripts from unit- 16 of Class-7th textbook. After that, a post-test was administered to both the

groups. Simultaneously a group of 26 teachers were selected randomly from the schools for observing the two groups of students. A self-constructed opinionnaire was given to them. The responses of the teachers were then subjected to some statistical analysis to know the relative effectiveness of the experiential- method and conventional method.

TOOLS

Four tools were used in the study. Researcher used two different self-prepared lesson plans for different groups but on the same unit. The post-test prepared by the researcher consisted of 25 items with a high content and reliability coefficient of .93. An opinionnaire or 5-point Likert-type attitude scale consisting of 26 items (13 items for control class and 13 items for experimental class) was prepared by researcher. Among the items, 24 items are positive statements and 2 items are negative statements. The scale has a reliability coefficient of .98 and high levels of validity.

DATAANALYSIS

The subjects were asked to give their responses on the scale of (MAX), (MOD), (U), (LIT) and (N). Here MAX/MOD/U/LIT/N implies that subjects highly agree that students have developed certain qualities (Critical thinking/ Reflective thinking / Hypo-thesising) to Maximum extent/ Moderate extent / Unknown extent/ little extent/ No extent respectively. The responses of the teachers were then subjected to some statistical analysis. The data obtained is given in the following table.

It is evident from the percentages data that there exists difference in opinion between control group and experimental group regarding the development of critical thinking. The Chi-Square value (9.658) is greater than critical value of Chi-Square at .05 level of significance (5.991) and the null hypothesis is rejected. It can be inferred that there is a significant difference between the opinion of teachers on control group and experimental group regarding the development of critical thinking. Experimental group likely to develop better critical thinking than control group.

Again, in case of reflective thinking the Chi-Square value (30.785) is greater than critical value of Chi-

Square at .05 level of significance (5.991). It can be inferred that there is significant difference between the opinion of teachers on control group and experimental group regarding the development of reflective thinking. Experimental group likely to develop better reflective thinking than control group.

Finally, in case of development of ability to form hypotheses. The Chi-Square value (18.975) is greater than critical value of Chi-Square at .05 level of significance (5.991). It can be inferred that there is significant difference between the opinion of teachers on control group and experimental group regarding the development of ability to form hypotheses. Experimental group likely to develop a better ability to form hypotheses than control group.

Opinions for control group and experimental group regarding the development of critical thinking/reflective thinking/hypothesizing

		Extent of Development						
		MAX	MOD	U/LIT/NO	Pearson Chi-Square	N	Df	.05 sig
Development of Critical Thinking	Opinion of % of Teachers about Control Group	26.9	26.9	46.2	9.658[a]	52	2	5.99
	Opinion of % of Teachers about Experimental Group	69.2	15.4	15.4				
Development of Reflective Thinking	Opinion of % of Teachers about Control Group	11.5	34.6	53.8	30.785[a]	52	2	5.99
	Opinion of % of Teachers about Experimental Group	88.5	3.8	7.7				
Development of Ability to form Hypotheses	Opinion of % of Teachers about Control Group	15.4	26.9	57.7	18.927[a]	52	2	5.99
	Opinion of % of Teachers about Experimental Group	69.2	23.1	7.7				

Table-1

CONCLUSION

The study produces the result that there is significant relationship between the opinion of teachers on control group and experimental group regarding the development of critical thinking, reflective thinking, and the ability to form hypotheses. The opinion of the observing teachers revealed that experimental group seemed to develop better critical thinking, reflective thinking, and the ability to form hypotheses. Schools should provide greater space for experiential learning to nurture scientific thinking and inquisitive young minds.

- Dr. Prasenjit Pal (Assistant Professor)
Department of Teacher Education
Nagaland University, Kohima Campus
Meriema, Kohima, Nagaland-797004
Mob. 8145821879

- Dr. Munni Chaudhary
Associate Professor
Department of Hindi
Nagaland University

References :

1. Arora, O.P (2008), Module on learners centered approach to curriculum, Oxford University Press,
2. Dienye, N.E. and Gbamannja, S.P.T. (1990), Science Education, Theory and Practice, Owerri : Totan Publishers Ltd.
3. Good, C.V. (2009), Dictionary of Education, New York, MC Grow Hill Book Company.
4. Kaul Lokesh (2004), Methodology of educational research, Delhi Vikas Publishing House Pvt. Ltd.
5. Mangal, S.K. (2004), Teaching of physical science (contents and pedagogy), New Delhi, Capital Offset Naveen Shahdara.
6. National curriculum framework (2005), N.C.E.R.T, New Delhi.
7. NEP (2020), MOE

दलित नारी संवेदना की दस्तावेज : 'सुमंगली'

– डॉ. जयश्री. ओ.

सारांशः

स्त्री समाज की मूलभूत इकाई है, पर भारतीय परिप्रेक्ष्य में स्त्री खासकर दलित स्त्री जाति तथा पितृसत्ता रूपी दोहरे अभिशापों के तीखे दंश को झेलने के लिए अभिशप्त है। नारी के दुखद वेदना के प्रति संवेदनशील साहित्यकार अनमना नहीं रह सकता। जातिवादी कुव्यवस्था के कारण समाज के सबसे निचले पायदान पर पड़ी दलित स्त्री की जिन्दगी की तहरीर अन्य साहित्य विधाओं की अपेक्षा हिंदी कहानियों में प्रभूत मात्रा में हुई है। इस दृष्टि से कावेरीजी का कहानी साहित्य खरा उतरता है। आपकी कहानी 'सुमंगली' इसका उत्तम निदर्शन है।

बीज शब्द : दलित–संवेदना – जातिवादी कुव्यवस्था – सामाजिक विडम्वनाएँ – कुत्सित मानसिकता– अमानवीय जुल्म –

विषय चयन

'दलित' का शाब्दिक अर्थ है जिसका दलन या उत्पीड़न किया गया हो। भारतीय सामाजिक व्यवस्था के संदर्भ में 'दलित' संबोधन वर्ण व्यवस्था के निचले पायदान पर होने के कारण शताब्दियों से शोषण, दमन व सामाजिक अव्यवस्था के शिकार असवर्ण वर्ग के लिए किया जाता है। जब वर्ण व्यवस्था कर्मानुसार न होकर जन्मानुसार हो गयी तो शूद्र समझी जानेवाली जातियों को शिक्षा व सामाजिक न्याय से वंचित होना पड़ा और कालांतर में इनकी अस्मिता विलीन हो गयी। दलित को इसी जातीयता ने गुलामी, दुःख, वेदना और दुरवस्था के सिवा कुछ नहीं दिया है। जाति के नाम पर होने वाले दुराचार या बहिष्कार भारतीय समाज में प्राचीन काल से हो रहा है। वर्ण व्यवस्था की यह कुत्सित मानसिकता इतना भयंकर रूप धारण कर गई कि इन हाशिएकृत लोगों की छाया का स्पर्श भी पाप समझा जाने लगा।

फलतः इस अवहेलित लोगों का जीना दूभर हो गया ।

इस हाशियेकृत जनता की दुरवस्था के विरुद्ध डॉ. अम्बेडकर, ज्योतिबा फुले जैसे महारथियों ने जो आन्दोलन चलाया साहित्यकारों ने उसे आगे बढ़ाया। यों सामाजिक जीवन की जड़ता, क्रूरता और अमानवीयता रेखांकित होने लगी। शोषण एवं उत्पीड़न के भिन्न–भिन्न सवालों से मुठभेड़ करते हुए दलित जीवन की संवेदना का जो वर्णन दलित लेखकों ने अंकित किया है वह भारतीय समाज की पोल खोल देती है। वास्तव में दलित कहानियाँ दलित जीवन की समस्याओं की कहानियाँ ही नहीं बल्कि भारतीय समाज द्वारा होने वाली क्रूरता या बर्बरता की कहानी भी है। इसका उत्तम उदाहरण है दलित साहित्य की महान हस्ताक्षर कावेरीजी की बहुचर्चित कहानी 'सुमंगली'।

महिला चाहे संभ्रांत वर्ग की हो या निर्धन वर्ग की उन्हें अपनी जिंदगी के प्रत्येक पड़ाव में यातनाएँ सहनी पड़ती है। किसी भी छत के नीचे वह सुरक्षित नहीं। महिलाएँ दलित है तो उन्हें दोहरा अभिशाप झेलना पड़ता है इस सभ्य समाज में। भारतीय समाज व्यवस्था दलितों के मौलिक अधिकारों को ही नहीं छीन लेता है बल्कि उन्हें निकृष्ट जीवन जीने के लिए बाध्य कर देता है। 'सुमंगली' नामक कहानी के जरिए कावेरी जी ने दलित वर्ग की महिलाओं की अंतः पीड़ा का सहज वर्णन एक–एक पर्त को उघाड़कर पाठक समक्ष पेश किया है। यथा :

आर्थिक दबाव

दलित युगों से सवर्ण वर्ग के शोषण, अन्याय और अत्याचार का शिकार बनकर मूक पशु के समान जीवन बिता रहे हैं। दिन भर कठिन मेहनत करने पर भी अपनी भूख मिटाने के लिए एक मुट्ठी अन्न के लिए बेचारे दलित को सवर्ण के सामने अपना हाथ पंसारना पड़ता है। विवेच्य कहानी की सुगिया दिन भर काम करने पर भी बीमारी से दम तोड़ने वाले अपने बच्चे की जान बचाने के लिए सबके सामने हाथ पसारकर थक जाती है। आर्थिक विपन्नता की वजह से अपने और अपने बच्चों के पेट की आग बुझाने के लिए इन्हें अपने देह की कुर्बानी देनी पड़ती है। इसका जीवन्त चित्रण लेखिका ने यों किया है – ''ममता की मूर्ति माँ उस भेड़िये के सामने अपना आंचल पसारकर गिड़गिड़ा उठी थी, "बाबू बड़ी मेहरबानी होगी।"..बच्चे को तुरन्त अस्पताल ले जाना हे। इस दुखिया पर दया करो। वह फिर गिड़गिड़ाई। लेकिन वह हवस का पुजारी अपने ही नशे में चूर उसकी बात नहीं सुन सका। बच्चे को गोद से छीनकर अलग लिटा दिया। सुगिया गिडगिड़ाती ही रह गई, 'बाबू ऐसा जुल्म मत करो। आखिर तुम्हारा ही बेटा है। पहले इसकी जान बचाओ।'[1] आर्थिक पराधीनता के कारण ही आज भी कामान्ध बर्बर पुरुष के आगे सुगिया जैसी असंख्य दलित स्त्रियां मासूम बेबस जीवन जीने को मजबूर है। भूखों मरने के डर से सुगिया अपने प्रति होने वाले अत्याचारों का विरोध नहीं कर पाती–"अगर काम छोड़ती है या अत्याचार का विरोध करती है तो भूखे मरने की नौबत आ जाती। यह पापी पेट जो न करवाये।.....वह जानती थी कि इस भेड़िये के पंजे से किसी को छुड़ाना आसान काम नहीं है।[2]

बलात्कार का शिकार

दलित नारी के प्रति होने वाले दुराभाव, अन्याय, शोषण आज समाज में बेखबर बन गई है। क्योंकि सभ्य मानने वाले समाज की धारणा है कि दलित अपनी कठपुतली मात्र है, उसे अपनी मर्जी से चूना लग सकता है। बेचारे दलित भी यह मानकर जीते हैं कि यही अपनी नियति है। दलितों को छूना उच्च वर्ग के लिए घोर पाप है। किंतु रात होने पर अपने शारीरिक लिप्सा का साधन बनाने में उन्हें कोई संकोच नहीं है। सुमंगली कहानी की पात्र सुगिया की जीवन गाथा सचमुच में शारीरिक शोषण का वृत्तचित्र है – 'सुगिया जब मात्र बारह वर्ष की थी तभी उसे औरत बना दिया गया था। उसे याद है वह काली मनहूस रात। अपनी टोली के बीच वह भी बेखबर सोई हुई थी। अचानक उसके शरीर पर लौह स्पर्श–सा दैत्यानुकूल छाया सवार थी। वह चीखती रही, सुबकती रही, भगवान का वास्ता देती रही, पर उसकी चीख

पुकार रात के अंधियारे में विलीन हो गई और वह वहशी दरिंदा, भूखा भेड़िया ठेकेदार अपनी मनमानी करके ही हटा। दर्द के मारे वह बेहोश हो गई।[3] सामंती व्यवस्था में दलित स्त्री सिर्फ उपभोग की वस्तु है। उनका मान–सम्मान अर्थहीन है। जीवन भर ठेकेदारों के हवस का शिकार बन कर जीना पड़ता है।

अमानवीय जुल्म से त्रस्त जीवन

दलित जीवन हजारों सालों से दुःख, पीड़ा तथा अनेक प्रकार की अमानवीय यातनाओं से त्रस्त है। इस प्रताड़ित जीवन को आज तक किसी भी इतिहासकार ने रेखांकित नहीं किया है।

दलितों के भोगे हुए नारकीय और दस्तावेजपूर्ण जीवन व्यक्ति विशेष का अपराध नहीं बल्कि व्यवस्था की वर्णवादी कुव्यवस्था है। समाज के सबसे निचले पायदान पर खड़ी दलित स्त्री के संबंध में अपने प्रति होने वाली सभी अन्यायों को चुपचाप सहनी पड़ती है। अपने को सभ्य मानने वाले उच्च वर्ग इसे अपना अधिकार मान लेते हैं–'चुप रह बेटी ! चुप रह ! यह तो एक न एक दिन होना ही था। परतु बड़ी अभाग्नि है री! जो इस छोटी उम्र में ही यह सब कुछ झेलना पड़ा। अब एकदम चुप हो जा, वरना पिचास को मालूम हो गया तो तेरी चमडी उधेडकर रख देगा। हां हम गरीबों का जन्म ही इसलिए हुआ है।'[4] समाज व्यवस्था में स्त्री होने के साथ दलित होना दलित स्त्री के संतापों को कई गुना बढ़ा देता है। कावेरी जी सुमंगली कहानी में ठेकेदारों के हाथ का मोहरा बनने वाली सुगिया के जीवन का यथार्थ चित्र खींचती है। मृत्यु से दम तोड़ते अपने नन्हें से बच्चे की रक्षा की याचना करते हुए उस बच्चे के ही जनक ठेकेदार के पास पहुंची बेचारी सुगिया से होने वाले अत्याचार अत्यंत हृदयभेदक है–"सुगिया पत्थर की बुत बनी अपने दम तोड़ते बच्चे को देख रही थी, फिर भी एक हल्की सी आशा लिए अपने आपको परिस्थिति के हवाले कर चुकी थी। कोई माँ अपने बच्चे को बचाने के लिए इससे बड़ी कुर्बानी और क्या दे सकती है। एक ओर उसके शरीर से खिलवाड़ हो रहा था, दूसरी ओर उसका बच्चा निर्जीव सा पड़ा था। कैसी विवश माँ है वो ..... अपनी अस्मत लुटाकर भी बच्चे को बचा नहीं पा रही थी।[5]

अस्मिता का संघर्ष

भारतीय समाज में स्त्रियों की जिंदगी पितृसत्ता और वर्ण व्यवस्था रूपी दो संरचनाओं से नियंत्रित है। ये दोनों स्त्री के देह और मन दोनों को बांधती है। सृष्टि के प्रारंभ से ही निम्नवर्ग की स्थिति दयनीय रही है। यह वर्ग हमेशा ठेकेदारों और जमींदारों के शोषण से पिसता रहा है। सामंती वर्ग की तिजोरी भरने तथा उनके काम लिप्सापूर्ति के साधन मात्र है यह निरीह वर्ग। इन्हें अपना शरीर, कमाई तथा जीवन पर कोई अधिकार या नियंत्रण नहीं है। भूख और अपमान से त्रस्त दलित नारी के संबंध में अपनापन या अस्मिता की सोच भी दण्नीय है। अतः सुगिया जैसी दलित नारी को जीवनभर अपनापन खोकर ठेकेदारों के हवस का शिकार बनना पड़ता है। उनके मातृत्व पर भी अक्सर कलंक लगाया जाता है–'हूँ है मेरा बेटा, छिनाल! पतुरिया ऐसी बात मुंह से निकाली तो गला घोंट दूँगा, समझी ? सौ मर्दों के पास रहकर मुझे बदनाम करती है। खबरदार! जो दुनिया की गन्दगी मेरे मुंह पर फेंकने की कोशिश की।"[6]

उपसंहार

औद्योगीकरण और आधुनिकरण से होकर भूमंडलीकरण के दौर में राष्ट्र, समाज तथा मानव परिवेश में लगातार परिवर्तन आया है। निर्भाग्य है कि मानवमन की संवेदनहीनता आज भी तथाकथित है। शक्तिसंपन्न सवर्ण वर्ग निरीह दलित को चूसते ही नहीं उन्हें अपने अधिकारों से सदा वंचित रखते हैं। कहानीकार कावेरीजी सुगिया के माध्यम से इस सत्य की ओर इशारा करती हैं कि सत्ता और संपत्ति केन्द्रित व्यवस्था में समाज के हाशियेकृत वर्ग को पशु से बदतर जीवन जीना पड़ता है जबकि संपन्न महिलाओं के सामने विकल्प के सभी रास्ते खुले रहते हैं। जवानीभर अपने शरीर को ठेकेदारों की हवस का शिकार बनने में विवश होती हैं सुगिया जैसी दलित नारी। मानवता के

नाम पर उसे जो प्यार मिलना है वह जीवन भर उससे वंचित रहती है। लेकिन खुशी की बात है कि जीवन की चुनौतियों से हारकर जिन्दगी को खत्म करना वह कदापि नहीं चाहती। सुगिया अपने एकमात्र सहारा मंगली नामक कुत्तिया से कहती है कि–"मंगली, तुझमें और मुझमें आज क्या फरक है तू भी जीवन की हारी, और मैं भी जीवन की हारी और अब जीयेंगे साथ और मरेंगे भी तो साथ ही। तेरे और मेरे दिल को समझने की कोशिश ही किसने की किसी ने भी तो नहीं। . . .तेरी और मेरी, एक कहानी। हम दोनों की कदर किसी ने न जानी.. ओर दो शरीर एक मानव, एक पशु दोनों बिल्कुल करीब थे... दूरियाँ भी नहीं थीं।[7] इस प्रकार कावेरीजी 'सुमंगली' कहानी में सुगिया के माध्यम से जाति की हीनता से दबे रहे दलित स्त्री जीवन के उत्पीड़न का यथातथ्य वर्णन के साथ भारतीय समाज की उस बिड़ंबना को रेखांकित करती हैं जिनमें धर्म, परंपरा, रूढ़िवाद को ढोती समाज व्यवस्था दलित स्त्री के प्रति निरंकुश होकर उसके प्रति हिंसात्मक रवैया अपनाती है।

– डॉ. जयश्री. ओ.
असोसियेट प्रोफसर
सरकारी ब्रेण्णन कॉलेज तलश्शेरी, कण्णूर, केरल
मोबा. 9539204383

संदर्भ :

1. सुमंगली– कावेरी–दलित महिला कथाकारों की चर्चित तहानियाँ – सं. डॉ कुसुम वियोगी–कंचन प्रकाशन–2012–पृ.सं. 38–39

–4–

2. वही. पृ.सं. 36–37
3. वही. पृ.सं. 37
4. वही. पृ.सं. 39
5. वही. पृ.सं. 37
6. वही. पृ.सं. 37
7. वही. पृ.सं. 40

भारतीय लोकतंत्र के दीर्घ दृष्टा : डॉ. बी.आर. अम्बेडकर के अनुसार लोकतंत्र

– डॉ. मगन भाई मकवाना

सारांश :

भारतीय संविधान के निर्माता डॉ. भीमराव बाबासाहेब अंबेडकर का सपना था कि भारत जाति मुक्त बने, औद्योगिक राष्ट्र बने, यहाँ हमेशा लोकतंत्र रहे। अंबेडकर को लोग केवल एक दलित नेता के रूप में ही देखते हैं जबकि उन्होंने बचपन से ही जाति प्रथा का खुलकर विरोध किया था। बाबासाहेब ने एक ऐसे भारत का सपना देखा था जो जातिवाद से मुक्त और आर्थिक दृष्टि से मजबूत हो, किंतु देश की भ्रष्ट राजनीति ने उन्हें लोक नेता के स्थान पर केवल दलित समाज के नेता के रूप में स्थापित किया है। डॉ . बाबासाहेब का एक और सपना था कि दलित भी समृद्ध बने वे हमेशा केवल नौकरी तलाशने वाले ही नहीं बल्कि दूसरों को नौकरी देने वाले भी बने ।

मुख्य शब्द : जीवन, शिक्षा, राजनीतिक, सामाजिक, आदर्श।

प्रस्तावना :

डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर का जन्म 14 अप्रैल, 1891 को मध्यप्रदेश के महू शहर में एक सैन्य छावनी में हुआ था। वह सूबेदार के पद पर कार्यरत सेना अधिकारी रामजी मालोजी सकपाल और भीमाबाई सकपाल की 14वीं और आखिरी संतान थे। वे आधुनिक भारत के जनक मानवाधिकार रक्षक और विद्वान होने के साथ ही भारतीय न्यायशास्त्री, अर्थशास्त्री, राजनीतिज्ञ तथा समाज सुधारक थे। इसी कारण उन्हें बाबासाहेब अम्बेडकर के नाम से जाना जाता है। इन्होंने दलित बौद्ध आंदोलन को प्रेरित किया।

वे स्वतंत्र भारत के पहले कानून और न्याय मंत्री थे, भारत के संविधान के मुख्य शिल्पकार थे। डॉ. बाबा साहब अम्बेडकर के विचार क्रांतिकारी और मानवतावादी थे।

डॉ. अम्बेडकर का शैक्षणिक कॅरियर शानदार था । उच्च शिक्षा के लिए वह मुंबई और फिर अमेरिका गये। उन्होंने कोलंबिया विश्वविद्यालय, न्यूयॉर्क से एम. ए. तथा पीएच. डी. की उपाधि प्राप्त की। अपनी पढ़ाई के दौरान वे अपना अधिकतर समय लाइब्रेरी में बिताते थे। भूखे रहकर भी अपने पैसे, किताबे खरीदने में ही उपयोग करते। भारतीय संदर्भ में, अम्बेडकर शायद पहले विद्वान थे जिन्होंने जाति से संबधित संविधान में महिलाओं के स्थान को समझने का प्रयास किया। उनके पूरे मनोमंथन में सबसे महत्वपूर्ण भाग महिला सशक्तिकरण का था। अम्बेडकर समझते थे की केवल ऊपर से उपदेश देकर महिला की स्थिति में सुधार नहीं होगा, उनके लिए कानूनी व्यवस्था बनानी होगी। हिंदू कोड बिल महिला सशक्तिकरण की असली खोज है। हिंदू कोड बिल भारतीय महिलाओ के सभी जुल्मो के अंत की शुरुआत थी, किन्तु दुःखद बात यह है की बिल संसद में पास नहीं हो सका और इसी कारण से डॉ. भीमराव बाबासाहेब अम्बेडकर ने मंत्री के पद से इस्तीफा दे दिया था।

सामाजिक असमानता के विरूध्द लड़ने वाले सैनानी :

डॉ. भीमराव अम्बेडकर मानते थे की भारतीय महिलाओं के पिछड़ेपन का मूल भेदभावपूर्ण सामाजिक व्यवस्था और शिक्षा की कमी है। शिक्षा के क्षेत्र में समानता के संदर्भ में अम्बेडकर का विचार स्पष्ट था उसका विश्वास था कि यदि हम लड़कों के साथ लड़कियों की शिक्षा पर ध्यान देना शुरू करे तो हम प्रगति कर सकते हैं। शिक्षा पर किसी एक वर्ग का अधिकार नहीं, समाज के सभी वर्गों को शिक्षा का समान अधिकार है। पुरुष शिक्षा की बजाय महिला शिक्षा अधिक महत्वपूर्ण है। महिला पूरे परिवार–व्यवस्था की धुरी होने के कारण इस बात को नकारा नहीं जा सकता है। बाबासाहेब अम्बेडकर का प्रसिद्ध मूलमंत्र 'शिक्षित बनो' से प्रारम्भ होता है इस मूलमंत्र को स्वीकार कर आज बहुत सी औरतें शिक्षित होकर आत्मनिर्भर बन रही है। बाबासाहब अम्बेडकर कुल 64 विषयों में निपुण थे साथ ही वें हिंदी, पाली, संस्कृत, अंग्रेजी, फ्रेंच, जर्मन, मराठी, फारसी और गुजराती इस प्रकार 9 भाषाओं के अच्छे जानकार थे। इसके अतिरिक्त उन्होने लगभग 21 वर्ष तक दुनिया के सभी धर्मों का तुलनात्मक अध्ययन किया था। डॉ बाबासाहब एकमात्र ऐसे भारतीय है, जिसकी प्रतिमा लंदन के संग्रहालय में कार्ल मार्क्स के साथ स्थापित किया गया है। भीमराव अम्बेडकर के पास कुल 32 डिग्रियाँ थी। 15 अगस्त, 1947 के दिन भारत की स्वतंत्रता के बाद जब कांग्रेस के नेतृत्व में नयी सरकार का गठन किया गया तब डॉ. बाबा साहेब अम्बेडकर को देश के पहले कानून मंत्री के पद पर नियुक्त किया गया। 29 अगस्त, 1947 को स्वतंत्र भारत का नया संविधान तैयार करने के लिए डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर को संविधान मसौदा समिति के अध्यक्ष के रूप में नियुक्ति किया गया। 26 नवंबर, 1949 को संविधान बैठक में उनके नेतृत्व में बने संविधान को अपनाया गया।

डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर के राजनीतिक विचार :

डॉ. बाबा साहेब अम्बेडकर की राजनीतिक विचारधारा भी मानव जीवन, मानव कल्याण और समानता के सिद्धांतों से जुड़ी थी। वे संसदीय प्रणाली के समर्थक थे। जिसकी तीन महत्वपूर्ण विशेषताएं हैं, स्वतंत्र और निष्पक्ष चुनाव, एक हत्थे और एक दलीय शासन से मुक्त प्रणाली और निर्वाचित प्रतिनिधियों में जनता का विश्वास। वे संसदीय प्रणाली में स्वतंत्रता और समानता के बीच असंतुलन से भी अवगत थे। हालाँकि उनका मानना था कि राजनीतिक लोकतंत्र का कोई विकल्प नहीं है। उनका दृढ़ विश्वास था कि लोकतंत्र के सुचारू रूप से कार्य करने के लिए सामाजिक और आर्थिक नींव मजबूत और सक्षम होनी चाहिए। इसीलिए उन्होंने समाजवाद को संविधान का हिस्सा बनाया। उनका दृढ़ विश्वास था कि संसदीय लोकतंत्र तभी सार्थक होगा जब सामाजिक और आर्थिक संस्थाएँ लोक कल्याण की ओर उन्मुख होंगी।

शैक्षिक विचारधारा : समाज में परिवर्तन लाने के

लिए शिक्षा एक प्रभावी उपकरण है। शिक्षा के माध्यम से मनुष्य अपने कर्तव्यों एवं अधिकारों के प्रति जागरूक होता है। प्राथमिक शिक्षा सभी शिक्षा की नींव है, इसलिए कहा जाता है कि शिक्षा बहुत अच्छी गुणवत्ता वाली होनी चाहिए। स्कूल ऐसे कारखाने हैं जो अच्छे नागरिकों और कर्तव्यपरायण नागरिकों की कमी को पूरा करते हैं। उनका मानना है कि शिक्षा ही राष्ट्रवाद और समाजवाद को स्थापित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

निष्कर्ष :

इस प्रकार कहा जा सकता है कि बाबासाहेब एक मौलिक विचारक थे और इस बात के गहन अध्येता थे कि सामाजिक व्यवस्था भारतीय समाज के अनुकूल कैसे होनी चाहिए। उनके इस प्रकार के चिंतन एवं विचार अत्यंत आदरणीय एवं वर्तमान समय में भी सर्वथा प्रासंगिक है। संक्षेप में, वह स्वतंत्रता, समानता और भाईचारे पर आधारित एक न्यायपूर्ण समाज के बारे में सोचते हैं। जब 26 जनवरी, 1950 को भारतीय संसद ने संविधान को अपनाया, तो उन्होंने कहा कि हम न केवल एक राजनीतिक लोकतंत्र बल्कि एक सामाजिक लोकतंत्र का निर्माण कर रहे हैं जिसमें हम स्वतंत्रता, समानता और बंधुत्व को जीवन के सिद्धांतों के रूप में स्वीकार करते हैं। डॉ अम्बेडकर एक सच्चे राष्ट्रवादी थे। उनके हृदय में देशहित सर्वोपरि था। उन्होंने हमेशा भारत को एक समृद्ध राष्ट्र बनाने का सपना देखा। डॉ आंबेडकर के विचारों का भारतीय समाज और युवाओं को गहराई से अध्ययन करने की बहुत आवश्यकता है। यदि उनके विचारों को वर्तमान भारत में लागू किया जाए तो हमारे देश की अधिकांश समस्याएँ निश्चित रूप से हल हो सकती हैं।

– डॉ. मगनभाई एम. मकवाना
सहायक प्रोफेसर
समाजशास्त्र विभाग
सरदार पटेल विश्वविद्यालय
वल्लभ विद्यानगर, आणंद (गुजरात)
मो. 9925065869

संदर्भ :

1. परमार डॉ. / पी. ए., 'महान प्रतिभा डॉ. बी. आर. अम्बेडकर'।
2. http://mr-m-wikipedia-org
3. शहारे, एम.एल. डॉ. भीमराव अम्बेडकर : जीवन और कार्य. एन. सीई. आर. टी., नई दिल्ली, 1987.
4. कीर, धनंजय. डॉ. अम्बेडकर : जीवन और मिशन, पोप्युलर, बम्बई, 1962.
5. कुबेर, डब्ल्यू.एन. डॉ. अम्बेडकर : ए क्रिटिकल स्टडी, पीपीएच, नई दिल्ली, 1973
6. कुबेर, डब्ल्यू.एन.बी.आर अम्बेडकर : एक जीवनी, भारत सरकार नई दिल्ली, 1978
7. कृष्णा अय्यर, भारत के मुख्य न्यायाधीश, अम्बेडकर स्मारक व्याख्यानरू जे.एन.यू., नई दिल्ली, 1976 .
8. अम्बेडकर, बीआर हिंदू सामाजिक व्यवस्थारू इसके आवश्यक सिद्धांत। शिक्षा विभाग, महाराष्ट्र सरकार, 1987 ।

Impact of Domestic Violence in Live-In Relationships : An Analysis under the Protection of Women from Domestic Violence Act, 2005

- Dr. Sudipta Adhikary
- Dr. Paramita Bhattacharyya

Abstract:

Domestic violence is a pervasive societal issue that transcends traditional boundaries, affecting individuals irrespective of their marital status. This article aims to shed light on the nature of domestic violence within the context of live-in relationships, examining its

causes, manifestations, and potential solutions. Live-in relationship is comparatively a new occurrence for the Indian culture. The ongoing discourse surrounding live-in relationships in India has sparked a significant debate, challenging the conventional norms of societal morality. Despite the societal reservations, the Indian judiciary consistently interprets the law favourably towards live-in relationships.

Consequently, it becomes imperative to safeguard the individuals involved, especially in instances of violence within such relationships. Although domestic violence is prevalent, it often goes unnoticed by the general populace. The legislation aims to address domestic abuse, particularly concerning women in legally married or marriage-resembling relationships like live-in partnerships. This work primarily concentrates on various facets of live-in relationships, with a specific emphasis on domestic violence within such relationships in the Indian context.

Key words : Live-in Relation, Domestic violence, Assault, Domestic Relation, Marital Status.

I.

Introduction :

In India, there is no specific legal framework governing the concept of a live- in relationship, and there is no dedicated statute addressing it. The legal landscape lacks clear provisions defining the rights and responsibilities of individuals in a live- in relationship, including the legal status of any children born within such unions. The absence of a statutory definition contributes to the uncertainty surrounding the legality of these relationships. Indian law does not confer any specific rights or obligations on participants in a live-in relationship. Nevertheless, through various court rulings, some insights into the nature of live-in relationships have been provided. Although the legal standing of such relationships remains unclear, efforts have been made to establish certain rights by interpreting and amending existing legislation, aiming to prevent the improper exploitation of these associations."[1]

II. Live in Relationship and Legislative Framework :

The legal standing of live-in relationships in India has been

established through judicial interpretation, with various Indian laws recognizing their legal status. In the case of Khushboo v. Kanniammal[2], it was asserted that live-in relationships fall within the ambit of the Right to Life guaranteed under Article 21 of the Indian Constitution, rendering them legally valid. The Supreme Court, in several instances, has issued judgments supportive of live-in relationships, emphasizing the judiciary's role in maintaining balance and justice. within society. In an effort to legitimize live-in relationships, the Maharashtra government in 2008 sought to amend Section 125 of the Criminal Procedure Code, aiming to broaden the definition of the term "wife" to include a female living with a male "like his wife" for a reasonably long period, as defined in the section. This initiative aligned with the recommendations of the Malimath Committee in 2003, which proposed expanding the scope of the term "wife."[3]

The Protection of Women from Domestic Violence Act, 2005 (PWDV Act, 2005), marks a significant legislative development, recognizing relations "in the nature of marriage" and providing legal recognition to relationships outside of traditional marriage. Prior to the enactment of the PWDV Act in 2005, there was no comprehensive law addressing all forms of violence against women within domestic settings. The Act also acknowledges the concept of live-in relationships, which was previously unrecognized by Indian law, offering legal protection to individuals in such arrangements. Furthermore, the PWDV Act 2005 has facilitated the legal recognition of relationships, such as live-in relationships, with equivalent status to marriage under various personal laws, including the Hindu Marriage Act.[4]

III. Judicial Response :

In the case of Shivashanka Shiva v. State of Karnataka & Another,[5] the Supreme Court asserted that engaging in prolonged sexual activity within a relationship cannot be categorized as rape, particularly when the complainant claims they cohabited as husband and wife.[6] The term 'violence' refers to actions causing harm, whether physical or mental. The courts have extended the scope of the Protection of

Women from Domestic Violence Act, 2005 (PWDV Act, 2005) to include live-in partners.[7] Love, trust, and mutual respect are the three vital components of any relationship. Regardless of societal views on marriage, the presence of these elements contributes to the happiness of any partnership.[8]

Honourable Justice A.K. Ganguly in Revanasiddappa v. Mallikarjun[9] held that, "With changing social norms of legitimacy in every society, including ours, what was illegitimate in the past may be legitimate today." Consequently, the judiciary considers various factors, including societal norms and constitutional principles, when making decisions in different situations. According to the Protection of Women from Domestic Violence Act, 2005 (PWDV Act, 2005), a relationship resembling marriage must fulfil certain fundamental requirements. The PWDV Act of 2005 does not allow exceptions for various types of live-in relationships, clarifying that brief encounters, such as one-night stands or weeklong connections, do not qualify as domestic partnerships.[10] The Supreme Court has stressed the significance of broadening Section 2(f) of the PWDV Act, 2005, which defines "domestic relationships," to encompass impoverished, illiterate individuals in illegal relationships and their offspring born into such relationships with no alternative means of support.[11]

IV. Conclusions :

To address these issues, there is a need for increased awareness to foster acceptance of such relationships. Rather than attempting to fit live-in relationships within existing laws, the Parliament should consider enacting specific legislation tailored to address the unique dynamics of live-in partnerships. Such an approach would contribute to clarity and fairness in the legal system, promoting justice and equality in society.

- Dr. Sudipta Adhikary
Associate Professor, Department of Law
Brainware University, West Bengal, India.
Mob : 8910270971

- Dr. Paramita Bhattacharyya
Assistant Professor, Department of Law
Brainware University, West Bengal, India.
Mob : 9434666124

References:

Mr. Rajendra Anbhule, "Aggrieved Women and Live-in Relationships: Judicial Discourse" *Bharati Law Review*, Jan.- Mar 67-70 (2013).

AIR 2010 SC 3196.

https://www.mha.gov.in/sites/default/files/criminal_justice_system.pdf (last visited on 28 January, 2024).

Criminal Appeal Number 504 of 2018, disposed of on 6th April, 2018.

Pallavi Gusain, Prof. (Dr.) Poonam Rawat, "Domestic violence in live-in relationship: A Judicial Discourse" 14(1) DLR 71-76 (2022).

Manju Jamwal, "Live in Relationship in India: Legal Moves and Judicial Attitude: Some Observations" Jan-June *RJNUL Law Review* 107-120 (2014).

https://www.mha.gov.in/sites/default/files/criminal_justice_system.pdf (last visited on 28 January, 2024).

(2011) 11 SCC 1.

D. Velusamy v. D. Patchaiammal, (2010) 10 SCC 469: AIR 2011 SC 479.

Pallavi Gusain, Prof. (Dr.) Poonam Rawat, "Domestic violence in live-in relationship: A Judicial Discourse" 14(1) DLR 71-76 (2022).

शैक्षिक संगठनात्मक सुधार और विद्यालयी शिक्षा : NEP-2020 के अंतर्गत गुणात्मक सुधारों का विश्लेषण

– डॉ संदीप कुमार
– डॉ. श्याम सुंदर

सारांश : शिक्षा किसी भी समाज की उन्नति और विकास की नींव होती है, और इसकी गुणवत्ता देश के भविष्य निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। विद्यालयी शिक्षा का गुणात्मक विकास तभी संभव है जब शैक्षिक संगठनात्मक ढांचे में बदलाव किए जाएं, जो समकालीन आवश्यकताओं और चुनौतियों के अनुरूप हों। इस आलेख में कोठारी आयोग, राष्ट्रीय पाठ्यचर्या रूपरेखा (NCF–2005) के संदर्भ लेते हुए, राष्ट्रीय शिक्षा नीति–2020 के अंतर्गत भारतीय विद्यालयी शिक्षा में संगठनात्मक सुधारों की विश्लेषणात्मक चर्चा की गई है। इन सुधारों में समावेशिता, व्यावहारिकता, बहु–विषयकता, लचीलापन, अनुभवात्मक अधिगम, शिक्षक प्रशिक्षण और प्रौद्योगिकी का एकीकरण शामिल हैं। इसका उद्देश्य शिक्षा के विभिन्न हितधारकों को इन सुधारों की समझ देना है, जिससे वे विद्यार्थियों के समग्र विकास को सुनिश्चित कर सकें और भविष्य की चुनौतियों का सामना करने के लिए उन्हें तैयार कर सकें।

कूट शब्द : संगठनात्मक सुधार, विद्यालयी शिक्षा, गुणात्मक सुधार, राष्ट्रीय शिक्षा नीति–2020 ।

प्रस्तावना : शिक्षा किसी भी समाज की उन्नति और विकास का आधार होती है, और इसकी गुणवत्ता देश के भविष्य के निर्माण में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। विद्यालयी शिक्षा का गुणात्मक विकास तभी संभव हो सकता है जब शैक्षिक संगठनात्मक ढांचे में बदलाव किए जाएं जो समकालीन आवश्यकताओं और चुनौतियों के अनुरूप हों। वर्तमान में, राष्ट्रीय शिक्षा नीति–2020 के तहत अनेक सुधार और बदलाव प्रस्तावित किए गए हैं, जिनका उद्देश्य विद्यालयी शिक्षा की गुणवत्ता को नई ऊंचाइयों पर पहुंचाना है, चाहे वह शैक्षिक नीति निर्धारण हो, पाठ्यक्रम विकास हो, शिक्षक प्रशिक्षण हो या विद्यालयी प्रबंधन। कोठारी आयोग

(1964–66) और राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा (NCF–2005) ने भी स्पष्ट रूप से यह प्रतिपादित किया कि शिक्षण के विभिन्न घटकों के समुचित संगठन से ही शिक्षण की गुणवत्ता को सुधारा जा सकता है।

शैक्षिक संगठन में बदलाव की आवश्यकता : शैक्षिक संगठन में बदलाव के पीछे कई कारक होते हैं, जैसे कि समय के साथ बदलते सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक परिवेश, वैश्विक परिदृश्य में बदलाव, और नई तकनीकी और शैक्षिक पद्धतियों का विकास। कोठारी आयोग (1964–66) ने शिक्षा प्रणाली में एकीकृत सुधार की आवश्यकता पर जोर दिया और बताया कि एक सुदृढ़ शैक्षिक संगठन गुणवत्तापूर्ण शिक्षा की नींव है। आयोग ने यह सुझाव दिया कि शिक्षा को केवल सूचनात्मक न बनाकर उसमें कौशल और मूल्य आधारित विकास को भी शामिल करना चाहिए।

संगठनात्मक सुधार से तात्पर्य : भारतीय शिक्षा व्यवस्था में संगठनात्मक सुधार का तात्पर्य शिक्षा प्रणाली के ढांचे, प्रबंधन और नीतिगत स्तर पर उन परिवर्तनों से है, जो शिक्षा की गुणवत्ता, समावेशिता और पहुंच को बेहतर बनाते हैं। संगठनात्मक सुधारों का मुख्य उद्देश्य शिक्षा को अधिक कुशल, प्रभावी और प्रासंगिक बनाना है, ताकि समाज के सभी वर्गों को समान अवसर प्रदान किए जा सकें। भारतीय शिक्षा के संदर्भ में विभिन्न शिक्षा आयोगों ने इन सुधारों की दिशा में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। इनमें प्रमुख रूप से कोठारी आयोग (1964–66) का उल्लेख करना अनिवार्य है। इस आयोग ने शिक्षा को "सामाजिक और राष्ट्रीय एकता" का माध्यम बताते हुए शिक्षा में समानता, गुणवत्ता और समग्रता पर जोर दिया। आयोग ने शिक्षा के संगठनात्मक ढांचे को मजबूत करने के लिए सुझाव दिए। इन सुधारों का उद्देश्य शिक्षा को अधिक समावेशी, आधुनिक और वैश्विक दृष्टिकोण से सुसंगत बनाना है, जिससे समाज के प्रत्येक व्यक्ति को गुणवत्तापूर्ण शिक्षा प्राप्त हो सके।

विद्यालयी शिक्षा के गुणात्मक विकास : विद्यालयी शिक्षा के गुणात्मक विकास के प्रमुख आयाम इस प्रकार है :–

समग्र शिक्षा का दृष्टिकोण : NEP–2020 में समग्र शिक्षा पर विशेष जोर दिया गया है। इसका उद्देश्य विद्यार्थियों को केवल अकादमिक ज्ञान तक सीमित न रखकर उनका शारीरिक, मानसिक, सामाजिक और नैतिक विकास करना है। यह बदलाव विद्यालयी शिक्षा में गुणात्मक सुधार की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है। जब विद्यार्थियों का सर्वांगीण विकास होता है, तब समाज के प्रति अधिक उत्तरदायी और सक्षम नागरिक बनते हैं।

बहु–विषयक शिक्षा और लचीलेपन की नीति : शैक्षिक संगठन में बहु–विषयकता और लचीलेपन को बढ़ावा देना एक और महत्वपूर्ण पहलू है। NEP–2020 के अनुसार, विद्यालयी स्तर पर बहु–विषयक शिक्षा को लागू किया गया है ताकि विद्यार्थी अपनी रुचियों और क्षमताओं के अनुसार विभिन्न विषयों का चयन कर सकें। यह बदलाव विद्यार्थियों की शैक्षणिक गुणवत्ता में सुधार लाने के साथ–साथ उनके आत्मविश्वास और सृजनात्मकता को भी बढ़ाता है।

प्रयोगात्मक और क्रियात्मक अधिगम : NCF – 2005 और NEP – 2020 ने शिक्षा में प्रयोगात्मक और क्रियात्मक अधिगम (experiential learning) को बढ़ावा देने की आवश्यकता बताई है। पारंपरिक रटंत पद्धति से हटकर क्रियात्मक शिक्षा पर बल दिया गया है, जहां विद्यार्थी अपनी सीख को वास्तविक जीवन के संदर्भ में लागू कर सकें। यह बदलाव शिक्षा के गुणात्मक विकास में सहायक होता है, क्योंकि इससे विद्यार्थी न केवल सैद्धांतिक ज्ञान प्राप्त करते हैं, बल्कि उनके समस्या–समाधान और निर्णय लेने के कौशल भी विकसित होते हैं।

शिक्षकों का प्रशिक्षण और पेशेवर विकास : गुणात्मक शिक्षा का सबसे महत्वपूर्ण पक्ष शिक्षकों का उचित प्रशिक्षण और पेशेवर विकास है। NEP–2020 और कोठारी आयोग दोनों ने इस बात पर जोर दिया कि शिक्षकों के प्रशिक्षण में सुधार के बिना विद्यालयी शिक्षा का गुणात्मक विकास संभव नहीं है। शिक्षकों को नई तकनीकों और पद्धतियों के बारे में प्रशिक्षित किया जाना

आवश्यक है ताकि वे विद्यार्थियों की सीखने की प्रक्रिया को प्रभावी और रोचक बना सकें।

प्रौद्योगिकी का एकीकरण : शिक्षा के संगठन में तकनीकी परिवर्तन ने विद्यालयी शिक्षा के गुणात्मक विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। डिजिटल शिक्षा, स्मार्ट क्लासरूम, और ऑनलाइन शिक्षण विधियों का उपयोग करके शिक्षा की गुणवत्ता को और भी बेहतर बनाया जा सकता है। इस नीति में डिजिटल शिक्षा के महत्त्व को स्वीकार किया है और इसे सभी छात्रों तक पहुंचाने के लिए विभिन्न उपाय सुझाए हैं।

समानता और समावेशन : कोठारी आयोग और NEP–2020 दोनों ने शिक्षा में समानता और समावेशन (Inclusive Education) पर जोर दिया है। शिक्षा का संगठनात्मक ढांचा ऐसा होना चाहिए जिसमें सभी वर्गों, लिंगों, और समुदायों के विद्यार्थियों को समान अवसर मिलें। इस दृष्टिकोण से विद्यालयी शिक्षा में गुणात्मक सुधार होता है, क्योंकि यह समावेशी और निष्पक्ष शिक्षा प्रणाली का निर्माण करता है।

विश्लेषण : राष्ट्रीय शिक्षा नीति (2020) में विद्यालयी शिक्षा के संगठनात्मक ढांचे में सबसे प्रमुख सुधारों में से एक बहु–विषयकता (Multidisciplinary) और लचीलापन (Flexibility) है। नीति का उद्देश्य यह है कि विद्यालयी स्तर से ही विद्यार्थियों को विभिन्न विषयों के साथ परिचित कराया जाए ताकि वे अपनी रुचियों और क्षमताओं के अनुसार शिक्षा ग्रहण कर सकें। इस नीति ने विद्यालयी शिक्षा में प्रयोगात्मक अधिगम पर भी जोर दिया है। इसका तात्पर्य यह है कि शिक्षा केवल पुस्तकीय ज्ञान तक सीमित न होकर विद्यार्थियों के जीवन में व्यावहारिक और सृजनात्मक रूप से लागू होनी चाहिए। इसके अंतर्गत परियोजना आधारित शिक्षण, समूह कार्य, वास्तविक जीवन की समस्याओं का समाधान और क्रियात्मक गतिविधियों को शामिल किया गया है। यह विद्यार्थियों को अधिक सक्रिय और रचनात्मक बनाने में मदद करता है और उनके समस्या समाधान और निर्णय लेने की क्षमता को भी बढ़ाता है।

विद्यालयी शिक्षा के संगठनात्मक सुधारों में शिक्षकों का प्रशिक्षण और पेशेवर विकास को भी प्रमुख स्थान दिया गया है। कोठारी आयोग और राष्ट्रीय शिक्षा नीति (2020) दोनों ने इस बात पर बल दिया कि शिक्षकों के प्रशिक्षण में सुधार के बिना विद्यालय शिक्षा में गुणात्मक सुधार संभव नहीं है। सुधारों में समानता और समावेशन (Inclusivity) का सिद्धांत भी प्रमुख है। नीति में यह सुनिश्चित किया गया है कि शिक्षा के क्षेत्र में सभी विद्यार्थियों को, चाहे वे किसी भी सामाजिक, आर्थिक या लैंगिक पृष्ठभूमि से हों, समान अवसर प्राप्त हों। साथ ही साथ शिक्षा के संगठनात्मक ढांचे में प्रौद्योगिकी का एकीकरण जैसे– स्मार्ट क्लासरूम, डिजिटल सामग्री, और ऑनलाइन शिक्षण के माध्यम से शिक्षा को और अधिक प्रभावी और सुलभ बनाया जा रहा है। इससे न केवल शिक्षण प्रक्रियाओं में नवाचार आ रहा है, बल्कि दूरस्थ क्षेत्रों और आर्थिक रूप से पिछड़े वर्गों तक गुणवत्तापूर्ण शिक्षा पहुंचाने में भी मदद मिल रही है।

निष्कर्ष : विद्यालयी शिक्षा की गुणवत्ता को बढ़ाने में राष्ट्रीय शिक्षा नीति – 2020 के तहत प्रस्तावित संगठनात्मक सुधार शिक्षा को अधिक समग्र, समावेशी और व्यावहारिक बनाने की दिशा में एक महत्त्वपूर्ण कदम हैं। बहु–विषयकता, प्रयोगात्मक अधिगम, शिक्षक प्रशिक्षण और प्रौद्योगिकी का एकीकरण जैसे सुधार भारतीय विद्यालयी शिक्षा को आधुनिक और वैश्विक मानकों के अनुरूप बनाते हैं। इन सुधारों का उद्देश्य केवल शिक्षण पद्धतियों में परिवर्तन करना नहीं है, बल्कि विद्यार्थियों के समग्र विकास को सुनिश्चित करना भी है।

– डॉ संदीप कुमार
सहायक प्रोफेसर, करीकुलम एवं पेडागोजी
मंडलीय शिक्षा एवं प्रशिक्षण संस्थान
(एस. सी. ई. आर. टी. दिल्ली सरकार)
दरियागंज, नई दिल्ली–110002
– डॉ. श्याम सुंदर
सहायक प्रोफेसर शैक्षिक नियोजन, शोध एवं आँकलन
मंडलीय शिक्षा एवं प्रशिक्षण संस्थान
(एस. सी. ई. आर. टी. दिल्ली सरकार)
भोलानाथ नगर, शाहदरा दिल्ली – 110032

संदर्भ :

कोठारी, डी. एस. (1966). शिक्षा और राष्ट्रीय विकास : शिक्षा आयोग की रिपोर्ट, 1964–66. भारत सरकार, शिक्षा मंत्रालय।

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद (2005). राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005. एनसीईआरटी ।

मानव संसाधन विकास मंत्रालय (2020) . राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020. भारत सरकार।

वंचित–उपेक्षित काव्यधारा की उत्तरोत्तर प्रगति

– डॉ. श्यौराज सिंह 'बेचैन'

विगत तीन दशकों से भारतीय भाषाओं में परंपरागत काव्य–सृजन के बरक्श वंचित–उपेक्षित कविता के नए–नए रूप उभरे हैं। यह जीवनवादी कविता वंचित–उपेक्षित उन स्वत्वबोधी समुदायों की ओर से आ रही है। यह उनके मनुष्य होने के बोध से उत्पन्न आत्म–सम्मान और अस्मिता के एहसास उनकी रचनात्मक अभिव्यक्ति अस्तित्व में आ रही है। वैश्विक साहित्य व्यवस्था की इस नयी करवट का विभिन्न देशों में विभिन्न रूपों में प्रकटीकरण हुआ। अफ्रीका–अमेरिका में यह रंग भेदी दासता के विरूद्ध अश्वेत कविता के रूप में आई। जाति–भेदी अकादमिक क्षेत्रों में इसका संज्ञान ना के बराबर लिया गया। भारतीय साहित्य के विकास क्रम में समाज सरोकारी साहित्य का दौर भी आना ही था। इसकी लोकतंत्र सापेक्ष चेतना ने स्वतंत्रता, बंधुता और भाईचारे के आधुनिक मूल्यों को पोषण प्रदान किया। हां अस्मिता विमर्श के तौर पर भारत में हिंदी, मराठी, पंजाबी और अंग्रेजी सहित भारतीय भाषाओं के विश्वविद्यालयी सिलेबस में एक वैकल्पिक विषय के तौर पर मुंबई, पूना, हैदराबाद, लखनऊ नानदेड, रांची, जे.एन.यू., डी.यू., और इग्नू आदि के पाठ्यक्रम में दलितों, आदिवासियों और स्त्रियों के साहित्य को जगह मिली। जिसमें काव्येत्तर सामग्री आत्मकथाएं आदि भी शामिल हैं। हिंदी में स्वामी अछूतानंद और बिहारीलाल 'हरित', युगीन काव्य का एक तरह इतिहास बोध का काव्य भी है। यह काव्यधारा उत्तरोत्तर गहन से गहनतर और व्यापक दायित्व बोधक होती चल रही है। हालिया प्रकाशित काव्यों पर आने से पूर्व पृष्ठभूमि या पूर्व की सुदीर्घ परंपरा का सिलसिला देखा जाना समीचीन होगा। उदाहरण के लिए अछूतानंद की 'कवि मंडली' के कवियों की कविता का अनदेखा यथार्थ सामने लाना हमारा दायित्व है।

बच्चा यादव 'लाला' नामक एक युवा कविता में खुद को डी–कास्ट कर लेता है, यहां तक कि वह अपने 'सरनेम' में यादव को तिलांजली देकर 'उन्मेश' लिखने लगता है। सोशल मीडिया पर छिछले प्रश्न लिखते ही वह प्रियदर्शन जैसे चर्चित लेखक की वाह–वाही का पात्र बन जाता है। कविता सामाजिक बिडम्बना और समसामयिक राजनैतिक संदर्भ के कारण ध्यानाकर्षक बन पड़ती है। हालांकि एक अन्य कविता में बच्चा का बचकानापन भी प्रकट हो जाता है–'जुल्म की ढलेगी शाम कब तक।, ये जाति सूचक नाम कब तक।'[1]

'दलित' एक वर्गीय शब्द है, 1928 में सर जॉन साइमन द्वारा डॉ. अम्बेडकर से पूछे जाने पर कि "क्या दलित से आपका मतलब अस्पृश्य से है?'' तो वे कहते हैं 'जी हाँ''[2] परन्तु समाज के ऊपरी संस्तरण बाह्मण से लेकर, नीचे शूद्र तक निर्धन हो या धनी कोई भी स्वयं को दलित मानने को तैयार नहीं होता है। स्थिति बोध को भी आधार नहीं बनाया जाता। सीधा जाति आधार होता है। चूंकि दलित शब्द एक वर्गीय शब्द है, तो यह बहुत सी जातियों– उपजातियों को अपने दायरे में ले लेता है। पर उन्हीं जातियों को जो अछूत, बहिष्कृत से 'हरिजन' और 'हरिजन' से दलित बनी हैं। संविधान में जिन्हें एक शेड्यूल्ड यानी अधिसूची में रखा गया है, जिसे एस.सी. कहा जाता है। तो प्रश्न उठता है, बच्चा यादव की दलित विषयक कविता में स्वानुभूति का तत्व है या नहीं? दलित बनकर (भूमिका अदा करना) और दलित जीवन जी कर, दालित्य सह कर कहने में कोई अंतर है या नहीं? साहित्य में परकाया प्रवेश की पद्धति का उल्लेख बहुत होता है। दलितों से जमीं–आसमान की दूरी रखने वाले ब्राह्मण लेखक दलित काया में प्रवेश कर सकते हैं तो यादव तो निचले तल की जातियां हैं, वे क्यों कर सकतीं ? हमारी शोध दृष्टि इस सूक्ष्म भेद–भाव को पकड़ पाती है या नहीं? बच्चा की कविता का पहला पद चुनावी चरित्र का खुलासा करता 'छिछले प्रश्न, गहरे उत्तर' है–

'कौन जात हो भाई ?/' दलित हैं साब!/नहीं मतलब किसमें आते हो?

आपकी गाली में आते हैं/गंदी नाली में आते हैं

और अलग की हुई थाली में आते हैं साब !

मुझे लगा हिंदू में आते हो !/आता हूं न साब ! पर आपके चुनाव में।"

उसके बाद की फोरम प्रश्नोत्तरी में आगे बढ़ती इस कविता में कवि बच्चा दलित क्या इतना कुछ पिलाता–खिलाता है कि उसे उल्टी हो जाए, मसलन–

'मुझे लगा शराब पीते हो!

पीता हूं न साब पर आपके चुनाव में।

क्या – क्या मिला है ?/जिल्लत भरी जिन्दगी

आपकी छोड़ी हुई गंदगी/और तिस पर भी आप जैसे परजीवियों की बंदगी साब!

मुझे लगा वादे मिले हैं!/मिलते हे। न साब ! पर आपके चुनाव में।

क्या–क्या खाते हो?/आपसे मार खाता हूं

कर्ज का भार खाता हूं/नहीं मुझे लगा कि मुर्गा खाते हो!

खाता हूं ना साब! पर आपके चुनाव में।''[3]

चिंतन में दलितों का दार्शनिक आधार रैदास, कबीर, फुले, अम्बेडकर, बुद्ध की वैचारिकी है और बच्चा की दलित विपयक शूद्र दृष्टि में दलित उपहास कितना है और संविधान प्रदत्त समता भाव कितना है। यादव स्पृश्य शूद्र होते हैं, वे छुए जा सकते हैं। यादव भी दलितों से अस्पृश्यता का बर्ताव करते हैं, उत्पीड़न और अत्याचार भी करते हैं। कई केसों मे तो ठाकुर, जाटों, लोध गुर्जरों से अधिक क्रूर हो जाते हैं । अति पिछड़ों और दलित जातियों के प्रति उनके रवैये को प्रकट करती 'मुसाफिर बैठा' की एक कविता दृष्टव्य है–

''और घरों की जनानियां भी/पानी भरती थीं वहां पर धोबनियों से सुविधाजनक छूत/बरता करती थीं ये गैर धोबी गैर दलित शूद्र स्त्रियां/जबकि खुद भी अस्पृश्य जात थीं ये/ सवर्णों के चौखटे में अलबत्ता उनके बदन पर/जो धवल साड़ी लिपटी होती थीं उनमें धोबी घर से धुल कर भी/रत्तीभर छूत नहीं चिपकती थी पर इन गैर सवर्ण स्पृश्यों की/बाल्टी की उगहन के साथ नहीं गिर सकती थी/धोबनियों की बाल्टी की डोर/साथ भरे पानी को/छूत जो जग जाती[4]

असंगघोप की एक कविता का शीर्षक है 'हमारी साहब की दरकार' प्रस्तुत पंक्तियों में ग्राम पंचायत का चरित्र चित्रण दृष्टव्य है।

"कमबख्त ऐसा तालाब भी क्या/जो जानवरों, मच्छरों, कुत्तों के लिए सब तरफ से है खुला हुआ/किन्तु सिवाय एक कोने के पंचायत की बाकी सारी जगह/बहुजनों के लिए बंद है दलित दोपाया जानवर है यहां/कितनी सदियां और लगेंगी उसे इन्सान मानने में/पंचायत के किसी पंच को नहीं पता।''[5]

'अयोध्या और मगहर के बीच' शीर्षक से कर्मानंद आर्य की कविता कबीर के संदर्भ को लेकर आती है।

"मगर शांत पड़ा है मगहर
वहां की जनता एक बदहवास नदी को छोड़ कर
नहाती है कुआनों, मलती है उस की धूल
जैसे कबीर आज भी प्रासंगिक हों सनातन मगहर में ।
फकीरी का वृक्ष पाले प्रजा भीतर
मगहर चर्चा में नहीं रहता
खुद से डरा सहमा पहुंचता है राजधानी
एक डरे हुए दलित की तरह
जिसका खेत छीन लिया है दबंगों ने ।
थाने में जिसकी रपट नहीं लिखता दरोगा
उल्टा चोरी के आरोप में कैद करता है उसकी आत्मा
हर बार विडंबना की राह चलता
मगहर अयोध्या के आईने में अपना अक्स देखता है
जैसे दाढ़ी का सफेद बाल देखता है बूढ़ युवा।''[6]

"फिर कहीं, चमार के बेटे को/पंचायती हुकुम से, लाठियों से अधमरा कर, दिन–दहाड़े जिंदा लटका दिया जाएगा/बरगद के पेड़ पर, चौधरी की लाड़ली के/प्रेम के इजहार पर ।

फिर कहीं बनाए जाएंगे/जातियों के नाम पर नए–नए मुहल्ले चमारवाड़ा, खटीकाना, नाईवाड़ा/तेलीवाड़ा, अहीरवाड़ा, खत्रीटोला, बामनटोला .....और, दे दिया जाएगा नारा, राष्ट्रीय एकता का।[7]

ओमप्रकाश वाल्मीकि ने अपने कटु अनुभवों से भरी आंखों से चातुर्यवर्णीय समाज के बहुत निचले पायदान पर खड़े हो कर देखा और पुरखों के साथ हुई अमानवीय ना–इंसाफी पर अफसोस जाहिर किया। किसी भी संवेदनशील हृदय को भीतर तक झकझोर देने वाला एहसास दर्ज किया–

"नहीं जानते थे/हत्या करना/वीरता की पहचान है/ लूट–खसोट अपराध नहीं संस्कृति है।/कितने मासूम थे वे/ मेरे पुरखे/जो इन्सान थे लेकिन अछूत थे!'[8]

एक अन्य कविता 'वह दिन कब आयेगा ?' में वाल्मीकि लिखते हैं–

'मेरी मां ने जने सब अछूत ही अछूत / तुम्हारी मां ने सब बामन ही बामन ।

कितने ताज्जुब की बात है / जबकि प्रजनन क्रिया एक ही जैसी है।

वह दिन कब आयेगा / जब बामनी नहीं जनेगी बामन

चमारी नहीं जनेगी चमार / भंगिन भी नहीं जनेगी भंगी।[9]

– डॉ. श्यौराज सिंह 'बेचैन'

(सीनियर प्रो. एवं पूर्व अध्यक्ष हिन्दी विभाग, डी.यू.)

संदर्भ :

1. बच्चा लाल उन्मेश (कब तक) – पृ. 32 – शछिछले प्रश्न गहरे उत्तर, न्यू वर्ल्ड पब्लिकेशन, सी – 515 बुद्ध नगर, इन्द्रपुरी, नई दिल्ली–12, सं. 2022
2. धनंजय कीर, डॉ. बाबा साहेब आंबेडकर रू जीवन चरित, पृ. 115, पॉप्युलर प्रकाशन प्रा. लि. 301, लक्ष्मी चेंबर्स भुलाभाई देसाई रोड मुंबई, संस्करण–2023
3. बच्चा लाल उन्मेश (कब तक) – पृ. 17 – शछिछले प्रश्न गहरे उत्तर, न्यू वर्ल्ड पब्लिकेशन, सी – 515 बुद्ध नगर, इन्द्रपुरी, नई दिल्ली–12, सं. 2022
4. मुसाफिर बैठा–"बीमार मानस का गेहष – रश्मि प्रकाशन – कृष्णा नगर, लखनऊ–23, संस्करण–2018
   असंगघोप–"बंजर धरती के बीज' – पृ. 73, रश्मि प्रकाशन, लखनऊ, संस्करण – 2019
5. कर्मानन्द आर्य–'अयोध्या और मगहर के बीच'– पृ. 59 दृ 60, – बोधि प्रकाशन, बाईस गोदाम, जयपुर – 302006, संस्करण–2016
7. सुदेश तनवर – 'नियति नहीं यह मेरी – पृ. 62–63, सबस्व फाउंडेशन, मुबारकपुर नई दिल्ली – 03, संस्करण : 1999
8. ओमप्रकाश वाल्मीकि – श्बस्स! बहुत हो चुका, पृ. 100, वाणी प्रकाशन सं. 1997
9. वही, पृ. 103.

अम्बेडकर जनसंचार के 14 भागों का विमोचन

समाचार **– साक्षी गौतम**

जो काम रूपचंद गौतम जी ने किया है इसका विमोचन राष्ट्रपति के द्वारा हो या न हो पर यह काम पूरी दुनिया में जाएगा। यह काम बहुत महत्त्वपूर्ण काम हुआ है। पत्रकारिता के क्षेत्र में रूपचंद गौतम ने एक महत्त्वपूर्ण काम किया। इसमें दलित, आदिवासी एवं पिछड़े वर्ग के इलेक्ट्रॉनिक मीडिया का भी मूल्यांकन हुआ है। जैसे ब्लैक लिटरेंचर पूरी दुनिया में गया वैसे ही हमारा साहित्य पुरी दुनिया में जाना चाहिए। सरकार कोई भी आ जाए वे हमारे साहित्य को नहीं रोक सकती। हम जो लिख रहे हैं उसे दुनिया की कोई ताकत नहीं रोक सकती । ये शब्द वरिष्ठ पत्रकार मोहनदास नैमिशराय ने मुख्य अतिथि के रूप में 'अम्बेडकर जनसंचार' के विमोचन के अवसर पर कहे।

यह कार्यक्रम साक्षी का बयान यूट्यूब चैनल एवं एकैडमिक पब्लिकेशन के माध्यम से हरकिशन सुरजीत भवन, नई दिल्ली के हॉल में 14 सितम्बर 2024 को सम्पन्न हुआ । चर्चा में भाग लेते हुए इग्नु के पूर्व प्रोफेसर टी. यू. फूलझेले ने कहा कि बाबा साहेब डॉ. अम्बेडकर ने देश को संविधान दिया आज डॉ. रूपचंद गौतम ने दलित, आदिवासी एवं पिछड़े वर्ग की पत्रकारिता का 14 भागों में इतिहास दिया है। आज इसका पता नहीं लग रहा है पर आने वाले दिनों में इसकी उपयोगिता का पता लगेगा। डॉ. गौतम की इन पुस्तकों को संदर्भ के रूप में प्रयोग किया जायेगा । इन्होंने यह अदभूत काम किया है। इस काम के लिये ये बधाई के पात्र हैं। ऐसे ग्रंथ का विमोचन राष्ट्रपति द्वारा होना चाहिए। आज हमें जरूरत है रूपचंद गौतम जैसे पत्रकारों की । ऐसे लोग विश्वविद्यालयों में जाए हमारे शोधार्थियों का मार्गदर्शन करे।

इलाहाबाद से आए अम्बेडकरी चिंतक एड. गुरुप्रसाद मदन ने अम्बेडकर जनसंचार के चौदहवें भाग

में अपनी बात रखते हुए कहा गीतो से अम्बेडकरी आंदोलन में जो मजबूती आई उसे इस खंड में आप महसूस कर सकते हैं। जब मैंने होश संभाला जब गीत हजारों लोगों को आंदोलित करता था। जो भी हमारा गीतकार था या ग़ज़लकार था उसने जब भी खड़े होकर मंच से आवाज दी एक दो नहीं बीसों हजार व्यक्ति आंदोलित हुए। डॉ. गौतम जी ने उन गीतों को खोज कर इस खंड में रखा है। इससे पहले गौतम जी अम्बेडकर जनसंचार के 13 खंड लिख चुके हैं। दूसरे खंड में गौतम जी ने स्वामी अछूतानंद द्वारा अहदि हिन्दू अखबार को भी उल्लेखित किया है। इन खंडो में इतिहास है, पत्रकारिता है और साहित्य और संस्कृति की झलक है, यह एक अदभूत काम है।

प्रो. एच. सी. बौद्ध जी ने कहा कि प्रथम भाग में हैंडबिल, पोस्टर, बुकलेट एवं स्मारिकाओ का ऐतिहासिक परिचय है। इनके माध्यम से बाबा साहेब डॉ. अम्बेडकर का विचार आगे बढ़ा। विचार से दलित समाज में परिवर्तन आया। समाचार पत्र–पत्रिकाएं प्रकाशित करनी प्रारंभ की। दूसरा भाग उत्तर प्रदेश की पत्र–पत्रिका के इतिहास को दर्शाता है जब कि तीसरा भाग दिल्ली की पत्र–पत्रिकाओं के इतिहास को। दसवां खंड सौ यूटयूब चैनलों पर आधारित है। इसमें पचास न्यूज चैनल, तीस साहित्य व संकृति के चैनल एवं 20 गीत व संगीत के चैनलों का मूल्यांकन है, जो बड़ा ही गंभीर काम है।

पुस्तक के लेखक डॉ. रूपचंद गौतम ने कहा कि मान्यवर कांशीराम ने एक बार कहा था कि यह समाज रूटलेश समाज है । मैंने इस बात का ध्यान रखते हुए पत्रकारिता के रूप में दलित, आदिवासी एवं पिछड़ा समाज जो रूटलेश था उसकी जड़ों को एकत्र करके आप लोगों के समक्ष चौदह भागों में प्रस्तुत कर दिया, इन चौदह भागों में सवा सौ सालों का इतिहास है। राजकीय महाविद्यालय बिरोहड़, झज्जर, हरियाणा से आए डॉ. अमरदीप ने कहा डॉ. रूपचंद गौतम द्वारा दिया गया दस्तावेज पत्रकारिता के क्षेत्र में एक महत्त्वपूर्ण दस्तावेज है।

मंच का संचालन करते हुए 'दैनिक भीम प्रज्ञा' के प्रधान संपादक हरेश पवार ने कहा आज 'अम्बेडकर जनसंचार' के 14 खंड़ प्रकाशित हो चुके हैं। दलित पत्रकारिता का नाम तो हम सबने सुना है पर आपके मन में सवाल खड़ा कर रहा होगा 'अम्बेडकर जनसंचार' क्या है? इसको इन चौदह खड़ों में विशेष रूप से आप पढ़ सकते हैं। जिस तरह से डॉ. गौतम साहब ने यह काम किया है निश्चिय ही गौरव की बात है।

साक्षी गौतम, दिल्ली
मो. 98689 83472

।। संविधान की घोषणा ।।

मैं युद्ध की घोषणा करता हूँ.
उन सब युद्धों की घोषणा
जो लड़े जायेंगे अभी, शेष है ...

घोषणा करता हूँ उस रामायण-महाभारत काल की युद्ध-भूमि से
जहाँ हजारों छोटी-छोटी लड़ाइयाँ
लड़ी जा रही हैं हर समय
हर गली-चौराहे पर आदमी से आदमी की अपने-आप से

घोषणा करता हूँ और लौटता हूँ
जहाँ सम्प्रदायवाद, जातिवाद, भाई-भतीजावाद, सामंतवाद, आतंकवाद
और पूँजीवाद से मानवता खामोश हैं
युद्ध शुरु होने से पूर्व की बर्बरता और दहशत है
आजाद भारत के संसदीय लोकतंत्र के संविधान के पास
जाता हूँ और हर उस युद्ध की घोषणा करता हूँ
जिसे लड़े बिना हर नागरिक आदमी पूरा आदमी नहीं
और समाज भी पूरा संवैधानिक संकल्प का समाज नहीं
कर चुका हूँ घोषणा कि हजारों ओर से घिरा हूँ
अयोध्या, गोधरा, गंजबासौदा, धार और...

शोर, उत्पीड़न, हत्या, आगजनी, तोड़-फोड़, प्रदर्शन, हड़ताल
हजारों तलवारों और त्रिशूलों के एक ही साथ चलने से
करोड़ो लोगों के एक ही समय दौड़ने-भागने से

हरा हूँ या जीता हूँ
छब्बीस जनवरी सन् उन्नीस सौ पवास से
लेकिन हूँ अब भी युद्धभूमि पर मैं
झण्डा उँचा रहे हमारा का संकल्प दोहराते हुए
समता-स्वतंत्रता-बंधुता के समाज की बात करते हुए
संसद भवन की उठा-पटक के मध्य खड़ा हूँ
अपनी ही ओर से युद्ध की घोषणा की प्रतीक्षा में
मैं ! भारत का संविधान ।

- डॉ. पुरुषोत्तम सत्यप्रेमी - परतों का दर्द

भगवान बिरसा मुंडा जयंती

15 नवम्बर

के अवसर पर हार्दिक बधाई एवं मंगल कामना

पंजीयन संख्या
RNI No. MPHIN/2002/9510

डाक पंजीकृत क्रमांक मालवा डिवीजन/204/2024-2026 उज्जैन (म.प्र.)

प्रतिष्ठा में ,

_____

_____

_____

_____

पत्र व्यवहार का पता :
20, बागपुरा, सांवेर रोड,
उज्जैन 456 010 (म.प्र.)

प्रकाशक, मुद्रक पिंकी सत्यप्रेमी ने भारती दलित साहित्य अकादमी की ओर से
मालवा ग्राफिक्स, 29, वररुचि मार्ग, गुरुद्वारे के सामने, फ्रीगंज, उज्जैन फोन : 0734-4000030 से मुदित एवं
20, बागपुरा, सांवेर रोड, उज्जैन 456 010 (म.प्र.) फोन : 0734-2518379 से प्रकाशित।

सम्पादक : डॉ. तारा परमार